इकाई–2: नातेदारीः आधारभूत शब्द एवं अवधारणाः कुल, गोत्र, भ्रातृदल, द्विदल, नातेदार समूह, सहवंशीय स्वजन, निकटाभिगमन, वंशानुक्रम (Kinship: Basic Terms and Concepts: Lineage, Clan, Phratry, Moiety, Kingroup, Kindred, Incest, Descent)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

2.1 कुल, गोत्र, भ्रातृदल, द्विदल, वंशानुक्रम (Lineage, Clan, Phratry, Moiety, Descent)

2.2 नातेदार समूह, सहवंशीय स्वजन (Kingroup, Kindred)

2.3 सारांश (Summary)

2.4 शब्दकोश (Keywords)

2.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

2.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- कुल, गोत्र, भ्रातृदल, द्विदल के अर्थ को समझना।
- नातेदार समूह, सहवंशीय स्वजन की अवधारणा की जानकारी।
- नातेदारी व्यवस्था में वंशानुक्रम के निर्धारण को समझना।

प्रस्तावना (Introduction)

प्राक्कल्पित आधार पर कहें तो **परिवार-पूर्व की कोई भी अवस्था, सामाजिक संगठन-रहित संस्कृति विहीन अवस्था ही रही होगी।** तथापि, एक सामाजिक समूह के रूप में परिवार न तो एकमात्र समिति है, और न स्वजन

संबंधों पर आधारित एकमात्र समूह ही। नगर समाज में प्रचलित होटल, रेस्ट्रां, शिशुगृह, स्कूल, कॉलेज, अस्पताल क्लब, बैंक आदि। वैयक्तिक हितों पर आधारित द्वितीयक समूह भी हमारी अनेक आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। आदिम समाजों में इसी प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति परिवार एवं अन्य प्रकार के स्वजन समूहों द्वारा की जाती है। ये स्वजन समूह दूसरी सुरक्षा पंक्ति जैसे होते हैं।

परिवार स्वजनता के एकतात्मक संबंधों पर आधारित होता है। इस एकता का विस्तार सर्वत्र दो दिशाओं में होता है–

पिता के जन्म के परिवार की दिशा में और माँ के जन्म के परिवार की दिशा में।

2.1 कुल, गोत्र, भ्रातृदल, द्विदल, वंशानुक्रम (Lineage, Clan, Phratry, Moiety, Descent)

आधुनिक प्रचलन के अनुसार संतान द्वारा माँ के जन्म के परिवार के कुल या गोत्र के नाम का प्रयोग नहीं किया जाता। इतना ही नहीं, स्त्री अपने विवाह के बाद न केवल अपने जन्म के परिवार के कुल या गोत्र का नाम ही छोड़ देती है, अपितु अपने पति के परिवार का कुल-नाम भी ग्रहण कर लेती है। तथापि कोई भी परिवार इन दोनों पक्षों में से किसी भी एक की बहुत अधिक अंशों में अनदेखी नहीं कर सकता। इसीलिए परिवार को **उभयपक्षीय समूह** कहा जाता है। इस उभयपक्षीय विशेषता का एक विशिष्ट उदाहरण कादर जन-जाति में देखने को मिलता है। कादर दोनों पक्षों को समान महत्त्व देते हैं, या समान रूप में ही दोनों की अनदेखी करते हैं। ऐसा कोई विशिष्ट उदाहरण नहीं है जिससे यह सिद्ध हो कि परिवार को कहीं एकपक्षीय समूह के रूप में ही मान्यता दी जाती है। **मोरिस ओपलर** की यह व्याख्या पूर्णत: गलत है कि उत्तरी भारत के गाँवों में परिवार एकपक्षीय समूह होते हैं।

एकपक्षीय समूह: वंश, सिब/कुल

स्वजन समूहों के कई अन्य प्रकार भी हैं। ये परिवार से इस अर्थ में भिन्न होते हैं कि इनमें दो में से किसी एक पक्ष की पूरी तरह अनदेखी की जाती है। अत: ऐसे समूह एकपक्षीय होते हैं। ये समूह ऐतिहासिक दृष्टि से परिवार से प्राचीन नहीं है, इसलिए कि संसार के आदिमतम एवं सामान्यतम समाजों में ये नहीं पाए जाते। कादर में ऐसा **एकपक्षीय समूह** नहीं पाया जाता, न अंडमान द्वीपनिवासियों में ही। इनसे किंचित विकसित कुमार और बैगा तथा भारत की अधिकांश अन्य जनजातियों में ये अवश्य पाए जाते हैं। फिर भी, जहाँ कहीं भी ये पाए जाते हैं वहाँ परिवार न तो विलुप्त होता है और न महत्त्वहीन ही। एकपक्षीय समूह स्वजनों की दो कोटियों के बीच विभेदीकरण पर आधारित होते हैं। प्रत्येक व्यक्ति इनमें से किसी एक को ही अपने लिए चुनता है। इस प्रकार का विभेदीकरण और चयन बौद्धिक दृष्टि से विकसित एवं सामाजिक दृष्टि से प्रगतिशील लोगों का परिचायक होता है। प्रकार्यवादी दृष्टि से, एकपक्षीय सिद्धान्त पर आधारित ये समूह सामाजिक संबंधों की मान्यता के माध्यम से उन विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं जो परिवार के कार्य-क्षेत्र में नहीं आतीं। इससे आपसी संघर्ष टल जाता है और परिवार एवं एकपक्षीय समूहों के बीच सहअस्तित्व भी संभव होता है।

एकपक्षीय समूहों का एक सामान्यतम प्रकार **वंश (लिनिएज)** है। सभी संभावित एकपक्षीय रक्त संबंधी इसके सदस्य होते हैं। जब इस प्रकार के समूहों का विस्तार समान वंशनुक्रम द्वारा संबंधित माने जाने वाले सभी सदस्यों का समावेश अपने में कर ले तब ऐसा विस्तृत समूह **सिब या कुल (क्लान)** कहलाता है। इस प्रकार, एक सिब या कुल कुछ वंशों का ऐसा संगठन होता है जिसका वंशानुक्रम, अंतत:, ऐसे मिथकीय पूर्वज से जोड़ा जा सकता है जो मानव या पशु, पेड़-पौधा या निर्जीव पदार्थ भी हो सकता है।

नोट

रेडक्लिफ-ब्राउन, थोड़े भिन्न रूप में, वंश को उस अर्थ में परिभाषित करते हैं जिस अर्थ में हमने सिब को परिभाषित किया है।

> *नोट्स* वंश समूह प्रयोग वंश के उन सदस्यों के लिए किया है जो किसी समय-विशेष में जीवित होते हैं। सिब भी रक्तमूलक समूह होता है किंतु इसके सदस्य संयुक्त आवासी नहीं होते।

एकपक्षीय समूहों में आमतौर पर सर्वाधिक व्यापक प्रचलित समूह **सिब या कुल** है। इसकी रचना उन एकपक्षीय रक्तसंबंधियों से होती है जो बहिर्विवाही समूह के रूप में समूह-बद्ध होते हैं। औपचारिकत; संयुक्त (एकक्षेत्रीय) निवास और किसी पशु, पौधे, या भौतिक वस्तु (टोटमवादी) से रहस्यमय संबंध या वंशनिर्धारण कुल की दो अन्य सार्वभौम विशेषताएं बताई गई है। इस प्रकार, **रिवर्स** की परिभाषा के अनुसार, कुल जनजाति का एक ऐसा बहिर्विवाही संभाग है जिसके सदस्य समान वंशानुक्रम में विश्वास के आधार पर एक-दूसरे से सूत्रबद्ध होते हैं और एक टोटम या एकक्षेत्रीय आवास पर इनका समान स्वामित्व (अधिकार) होता है। **लोवी** ने अपनी परिभाषा में टोटमवाद को स्थान नहीं दिया है, इसलिए कि अमरीकी, अफ्रीकी एवं एशियाई कुलों में यह प्राय: अनुपस्थित होता है। उन्होंने एक-क्षेत्रीय आवास को भी, बिना कोई कारण बताए, अपनी परिभाषा से अलग कर दिया। लोवी ने ऐसा संभवत: इसलिए किया होगा कि, प्राय: मिथकीय स्वजनता पर आधारित होने के कारण कुल एक विस्तृत क्षेत्र में फैला हो सकता है, जैसा कि आस्ट्रेलियाई सिब और हिंदू गोत्र पर यह बात लागू होती है। **मर्डक** ने कुल को सामेल्य स्वजन-समूह कहा है क्योंकि इसमें रक्तमूलक स्वजनता और एकक्षेत्रीय आवास के सिद्धांत सम्मिलित हैं। यह लोवी के सिब या कुल से भिन्न हैं और इसके लिए मर्डक ने **एकपक्षीय रक्तमूलक स्वजन-समूह** संज्ञा प्रयुक्त की है। जिसकी एक सर्वाधिक व्याप्त विशेषता (मर्डक के सेंपल का 94.4 प्रतिशत) बहिर्विवाह है। बहिर्विवाह और कुल के अपरिहार्य संबंध के समर्थन में **लोवी** ने एक सशक्त कारण प्रस्तुत किया है। उन्होंने बताया कि यदि लोग स्वजन समूह के अंतर्गत ही विवाह करने लग जाते तो एक समय ऐसा आता जब एकपक्षीय और उभयपक्षीय वंशानुक्रम के बीच भेद करना असंभव हो जाता क्योंकि सभी व्यक्ति एक-दूसरे से उभयपक्षीय रूप में संबंधित हो जाते। इसलिए कुल की बहिर्विवाही विशेषता ही कुल को एक विशिष्ट समूह बनाती है। सिद्धांतत: यह बात काफी सही हो सकती है, किंतु शंका यह है कि आदिम लोग क्या शिक्षाविदों की तरह इतने तर्कशील हो सकते है? उनके लिए तो, चूँकि एक आयु-वर्ग के सभी सदस्य आपस में सहोदर-अर्थी शब्द द्वारा पुकारे जाते हैं, यानी सभी आपस में सहोदरवत होते हैं, अत: किसके साथ विवाह करना निकटाभिगमनपरक संबंध माना जाएगा। यह तय करना आसान नहीं होता।

भ्रातृदल और द्विदल

जब किसी कारण विशेषा से कई कुल एक बड़े समूह के रूप में संयुक्त हो जाते हैं तब ऐसे समूह को **भ्रातृदल (फ्रेट्री)** कहा जाता है। किसी जनजाति के सभी कुल जब केवल दो भ्रातृदलों में बंटे रहते हैं तब इससे पैदा होने वाली सामाजिक संरचना को **द्वैधसंगठन** कहा जाता है और इनमें से प्रत्येक भ्रातृदल को **द्विदल (मोइटी)**, अर्थात् अर्धांश कहते हैं। भ्रातृदल बहिर्विवाही हो सकते हैं और नहीं भी। दो टोडा भ्रातृदल (द्विदल)-तारथरोल और तेइवालिओल–अंतर्विवाही हैं, यद्यपि ये कई बहिर्विवाही कुलों में भी बंटे हुए हैं। कहा जाता है कि अंगामी नागाओं के द्विदल अतीत में अंतर्विवाही थे किंतु बाद में ये बहिर्विवाही हो गए। **बोंदो** सामाजिक संगठन ओंताल और किल्लो नामक दो द्विदलों में बंटा हुआ है। अपनी पड़ोसी संस्कृतियों के संपर्क में आकर ये क्षेत्र-बहिर्विवाही और कुलबर्हिविवाही हो गए हैं। इसी से इनके द्विदलों में अंतर्विवाह का विकास भी हुआ है।

एक भ्रातृदल में कई कुल होते हैं। भ्रातृदल की रचना कैसे होती है इसकी जानकारी अपने-आप में महत्त्वपूर्ण है। इस संदर्भ में लोवी ने चार संभावनाओं का उल्लेख किया है–

प्रथम, कई कुल अपनी पूर्ववर्ती पृथकता के सभी अवशेषों को खोए बिना आपस में मिल सकते हैं।

द्वितीय, कोई कुल इतना बड़ा या व्यापक हो सकता है कि यह कई छोटे समूहों में बंट जाए। इन समूहों के बीच एकता के पूर्ववर्ती सूत्र पूरी तरह टूट नहीं पाते। कुलों के जोड़ या तोड़ के उदाहरण उरांव, हो और मुंडा नामक समस्रोतीय उत्पत्ति वाली जनजातियों में देखने को मिलते हैं।

तीसरी रोचक संभावना कुल के अवसान की है। टोडा जनजाति से ऐसी समाप्ति की सूचना रिवर्स ने दी है। इनके अनुसार, पहले टोडाओं में कई कुलों का प्रचलन था किंतु कालांतर में ये सब मिटते गए और इनमें से केवल दो बच रहे जिन पर इनका द्वैधसंगठन आधारित है। इस प्रक्रिया में एक कुल की इतनी वृद्धि होती गई कि इसके सदस्यों ने अपने जीवन-साथी (पति या पत्नी) अन्य सभी कुलों से लेना प्रारंभ कर दिया। परिणामत:, इन अन्य कुलों के बीच आपस में अंतर-विवाह करना कठिन हो गया और एक ऐसी स्थिति आई कि ये सब मिलकर एक-कुल बन गए। गोंडों में प्रचलित द्वैधसंगठन का उद्भव भी संभवत: इसी प्रकार हुआ होगा।

चतुर्थ, लोवी ने बताया कि कुल और द्विदलों की उत्पत्ति, अलग-अलग कारणों के फलस्वरूप, अलग-अलग तरह से भी हो सकती है। आगे चलकर ये आपस में मिलकर एक ही समाज-व्यवस्था के एक बड़े संगठन की रचना कर सकते हैं। लोवी की इस संभावना का आधार अमरीकी दत्त है।

पैतृकता और मातृकता

मोर्गन और उनके अनुयायियों ने सामाजिक संस्थाओं संबंधी अपने सभी अध्ययनों में इनकी उत्पत्तियों एवं आरंभिक प्रकारों का पता लगाने की कोशिश की है। इनका विश्वास रहा है कि सामाजिक उद्विकास एक अटल नियम है और सभी सामाजिक संस्थाओं पर सत्यत: लागू होता है। इस तरह मोर्गन का कहना है कि स्वजन समूहों का आदिम रूप कुल या झुंड था और परिवार का विकास, तुलनात्मक रूप में, इनसे बाद में हुआ था। इसी अटकल को आगे बढ़ाते हुए **मोर्गन** ने माना कि, उद्विकास की दृष्टि से पितृरेखीय कुलों की तुलना में से मातृरेखीय कुल पहले का है और इसीलिए यह मानव-समाज का सबसे प्राचीन स्वजन-समूह है। परिवार के उद्भव की व्याख्यार्थ भी मोर्गन ने कतिपय कारण संस्थापित किए हैं जो प्राक्कल्पित तथा अटकलबाजीपूर्ण ही हैं।

मोर्गन का विश्वास है कि यौनस्वाच्छंद्य मनुष्य के यौन संबंध की सर्वप्रथम अवस्था थी, अत: पैतृत्व निर्धारण सदैव कठिन था। परिणामत:, वंशानुक्रम मातृरेखीय रूप में निर्धारित होता था। समय के साथ-साथ, यौनस्वाच्छंद्य का स्थान नियंत्रित यौन संबंधों ने ले लिया और संपत्ति का संचय भी किया जाने लगा। इस स्थिति में पिताओं ने माताओं की उस सत्ता का विरोध किया होगा जिसके अंतर्गत उन्हें पितृपद के अधिकार एवं उनकी संतानों को संपत्ति के उत्तराधिकार से वंचित रखा गया था। मोर्गन के अनुसार, पिताओं के इस विद्रोह के फलस्वरूप पितृरेखीय सिबों की स्थापना हुई। यौनस्वाच्छंद्य की स्थिति में रक्तसंबंधियों के बीच प्रजनन प्राय: प्रचलित रहा होगा। मोर्गन का विश्वास है कि इस प्रकार के अंत: प्रजनन का संबंधित व्यक्तियों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ा होगा। इसीलिए बहिर्विवाही सिब को सुधारात्मक प्रयासों का परिणाम माना जा सकता है। अंत: प्रजनन के कल्पित दुष्प्रभावों को सत्य या असत्य सिद्धि करने का कोई चिकित्साशास्त्रीय या ऐतिहासिक प्रमाण उपलब्ध नहीं है। मोर्गन के तर्क को इसलिए भी स्वीकार नहीं किया जा सकता कि सिब-बहिर्विवाह के अंतर्गत जैविक रूप में असंबंधित लोगों के बीच विवाह चाहे निषिद्ध किया जाता हो किन्तु रक्त-संबंधी समोदरों के बीच विवाह को स्वीकृति प्रदान की ही जाती है।

बहिर्विवाही सिबों की उत्पत्ति एवं पैतृकता की तुलना में मातृकता की प्राचीनता संबंधी मोर्गन का विवेचन अटकलबाजीपूर्ण अधिक एवं ऐतिहासिक कम है। समकालीन आदिम समाजों में सिबों के प्रचलित उदाहरण के

नोट

आधार पर भी मोर्गन का दावा असत्य लगता है। मोर्गन के सिद्धांत के अनुसार इनका वितरण सार्वभौम नहीं है, किंतु वस्तुस्थिति के आधार पर मोर्गन का सिद्धांत स्वत: गलत सिद्ध हो जाता है।

आदिमतम समाजों में कुल नहीं होते। इसका एक विशिष्ट उदाहरण अंडमान द्वीप निवासी हैं। कादर जनजाति में कुल न पाए जाने की चर्चा हम पहले कर ही चुके हैं। आस्ट्रेलियाई आदिवासी समाज में सिब पाए जाते हैं, जबकि अन्यत्र सिब के साथ परिवार भी प्रचलित पाए गए हैं। यहाँ यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि आस्ट्रेलियाई आदिवासी, किसी भी रूप में, अंडमान द्वीप-निवासियों की तुलना में अधिक आदिम नहीं हैं। अफ्रीकी आदिम जनजातियों में होटनटोट में सिब नहीं पाए जाते जबकि बांटू और मसाई में पाए जाते हैं। उत्तरी अमरीकी इंडियनों के सामाजिक जीवन से भी ऐसे उदाहरण प्राप्त किए जा सकते हैं। साथ ही, संपत्ति वृद्धि ने मातृकता की सभी स्थितियों में गड़बड़ पैदा नहीं की है। भारत में भी, खासी उत्तराधिकार व्यवस्था पर आलू जैसी व्यापारिक फसल की खेती के कारण हुई संपत्ति वृद्धि का कोई प्रभाव नहीं पड़ा है। हाँ, ईसाइयत ग्रहण कर लेने के फलस्वरूप कई समस्याएँ अवश्य पैदा हुई हैं। गारो जनजाति की स्थिति भी ऐसी ही है। उत्तरी अमरीकी नवाहो, को और हिदास्ता जनजातियों में पशु संपत्ति के रूप में संपत्ति संचय के पश्चात् भी मातृरेखीय उत्तराधिकार का प्रचलन जारी रहा है। जैसाकि ऊपर बताया जा चुका है, कुल बहिर्विवाह के जैविक दृष्टि से उपयोगी परिणामों को समूचित शोध द्वारा समर्थन नहीं दिया जा सका है। साथ ही, इस बात को भी नज़रअंदाज नहीं किया जा सकता कि कुल बहिर्विवाह परिवार के केवल एक पक्ष पर लागू होता है, न कि दोनों पर। संतानोत्पत्ति में पिता की भूमिका के ज्ञान के अभाव को भी मोर्गन ने मातृकता की प्राचीनता की पुष्टि हेतु एक प्रमाण बताया। किंतु **मालिनोस्की** एवं अन्यों में दर्शाया है कि पिता की समाजशास्त्रीय भूमिका सामाजिक दृष्टि से काफी महत्त्वपूर्ण होती है, और यह सर्वत्र मान्य है। कई समाजों में पैतृकता निर्धारण एवं अभिग्रहण करने के परंपरागत तरीके होते हैं। इसी संदर्भ में बहुपतिविवाही टोडाओं के तीर एवं कमान भेंट करने के आयोजन का उल्लेख अन्यत्र किया जा चुका है। प्रकार्यक या समाजशास्त्रीय पितृत्व की तुलना में जैविक पितृत्व की महत्त्वहीनता इससे परिलक्षित हो ही जाती है। **पिता** कहे जानेवाले व्यक्ति के साथ कतिपय सामाजिक कार्य जुड़े रहते हैं। जब तक ये कार्य पूरे होते रहते हैं तब तक समाज इस बात पर विशेष ध्यान नहीं देता कि जैविक पितृत्व और समाजशास्त्रीय पितृत्व मेल खाए ही। वस्तुत:, सामाजिक कार्य एवं इनकी मान्यता ही महत्त्वपूर्ण तथ्य है, न कि जैविक स्थिति। संभवत: इसी तथ्य की अवगतता के फलस्वरूप लैटिन भाषा में **पेटर** और **जेनिटर** दो शब्द ग्रहण किए गए जिनके अर्थ क्रमश: समाजशास्त्रीय पिता एवं जीवनशास्त्रीय पिता है। इसलिए, **जेनिटर** कौन है इसके अज्ञान को मातृकता की प्राचीनता का सर्मथक तर्क नहीं माना जाना चाहिए।

टायलर ने अपने एक लेख में मोर्गन जैसी ही व्याख्या प्रस्तुत की है। उनका कहना है कि जैसे भूगर्भिक स्तर पृथ्वी पर सर्वत्र एक समान होते हैं उसी तरह सांस्कृतिक स्तर भी एक समान एवं सार्वभौम होते हैं और प्रजाति, भाषा तथा सांस्कृतिक विशिष्टताओं के वैविध्य से अप्रभावित रहते हैं। टायलर का विश्वास है कि भली प्रकार की गई जाँच से इन सांस्कृतिक स्तरों का एक ऐसा स्तरीकरण प्राप्त हो सकता है जिसके आदि, मध्य और आधुनिक स्तर क्रमश: मातृक, मातृक-पितृक और पितृक हों। ऐसी दलील के समर्थन में विधवा उत्तराधिकार विवाह (पिता की मृत्यु के पश्चात् पुत्र द्वारा अपनी सौतेली माँ या माताओं को उत्तराधिकार में ग्रहण करना) और कूवेद नामक संस्थाओं की ओर संकेत करते हुए यह बताया गया कि ये क्रमश: मातृक-पितृक और पितृक स्थितियों में ही पाई जाती हैं। पितृक स्थितियों में कूवेद जिस तरह क्षीणप्राय: हो गया है उससे भी मातृक स्थिति की प्राथमिकता की पुष्टि होती है। मातृक स्थिति की परिभाषा के अंतरगत मुख्य लक्षण मातृरेखीय वंशानुक्रम, माँ की सर्वोच्च सत्ता (मातृ अधिकार)—जो प्राय: माँ के भाई द्वारा संचालित की जाती हैं (मातुल सत्ता), संपत्ति और पद का **स्त्रीरेखीय उत्तराधिकार,** आदि बताए गए हैं। अभी तक ऐसे किसी समाज की जानकारी प्राप्त नहीं हुई है जिसमें ये कारक इनकी पुरातन-शुद्धता एवं उत्कर्ष सहित विद्यमान हों। खासी जनजाति इसका केवल निकटतम प्रतिनिधित्व ही है।

टायलर का सिद्धांत तार्किक दृष्टि से सही है किंतु तथ्यात्मक प्रमाणों के अभाव में असफल रहा है। इसकी कुछ सीमाओं का उल्लेख ऊपर किया ही जा चुका है। इस संबंध में लोवी की आपत्ति की भी अनदेखी नहीं कि जा

सकती। वे कहते हैं कि केवल तर्कसंगत होने के कारण ही सांस्कृतिक संस्थाओं की ऐसी अनम्य (स्थिर) क्रमावस्थाओं को स्वीकार नहीं किया जा सकता क्योंकि संस्कृति का प्रसार ऐसे विकास को ध्वस्त कर देता है।

मातृकता से पैतृकता के विकास की धारणा को शुद्ध तार्किक आधार पर भी स्वीकार नहीं किया जा सकता, क्योंकि स्वतंत्र रूप में या प्रसार द्वारा हुए इस तरह के विकास में पिछला प्रचलन एकदम उलट जाता है और पूर्णत: विरोधात्मक सिद्धांत अंगीकार करना पड़ता है। सामाजिक संगठन की ये दोनों अवस्थाएँ कालक्रमिक अवस्थाएँ नहीं हैं। अत:, जैसाकि **लोवी** का कहना है, इनकी व्याख्यार्थ दो अलग-अलग सिद्धांतों की जरूरत है। यह बात इस तथ्य से परिपुष्ट होती है कि कई पितृसत्तात्मक आदिम जनजातियाँ प्राचीनतम काल से ही ऐसी रही हैं जबकि कई विकसित जनजातियाँ अब भी मातृसत्तात्मक हैं। इससे दो स्पष्ट निष्कर्ष निकलते हैं। प्रथम यह कि परिवार सभी प्रकार के समाजों में तथा सभी सांस्कृतिक स्तरों पर पाया जाता है जबकि सिब न तो अति आदिम न काफी विकसित किंतु केवल माध्यमिक प्रकार के समाजों में ही विद्यमान होता है। द्वितीय, मातृसिब (मातृकता) और पितृसिब (पैतृकता) में संबंध न तो कारण-कार्य प्रकार का है और न स्थिर क्रमावस्था प्रकार का।

मातृकता और पैतृकता के उद्भव के संभावित कारणों की चर्चा करते हुए लोवी ने बताया है कि जिस तरह इन दोनों में एकतरफा (एकपक्षीय) जोर दिया जाता है उसे देखते हुए आवास एवं संपत्ति के उत्तराधिकार के तरीकों के एक ही दिशा में पड़े सम्मिलित प्रभाव को इनकी उत्पत्ति का कारण मानना पर्याप्त हो सकता है। विवाह द्वारा प्रभावित न होने वाला अपरिवर्तनशील नामकरण (कुल नाम) इनकी स्थायी सदस्यता का परिचायक होता है, और कुल इसी का द्योतक है। फिर भी, पैतृकता में पुत्रियाँ और मातृकता में पुत्र पैतृक संपत्ति में से प्राप्त होने वाले अपने हिस्से को आगे हस्तांतरित नहीं कर सकते। इस तरह, संपत्ति का मात्र एकरेखीय उत्तराधिकार इस एकपक्षीय महत्त्व को बनाए रखता है। रेड्डी कुलों में एक अपवाद इस रूप में देखने में आया है कि स्त्री विवाह के पश्चात् अपने पति का कुल नाम ग्रहण नहीं करती। टोडाओं में भी एक ऐसी ही पद्धति का प्रचलन बताया गया है।

भारतीय जनजातियों में कुल संगठन

कमार, चेंचू और **बिरहोर** जैसी पिछड़ी जनजातियों सहित भारत की लगभग सभी जनजातियों में कुल पाया जाता है। मंगोल और प्रोटो-आस्ट्रेलियाई नामक दो मुख्य प्रजाति वर्गों से संबंधित विभिन्न भारतीय जनजातियों में कुल के प्रचलन का उल्लेख विभिन्न नृवर्णनवेत्ताओं ने किया है। हाँ, अंडमान द्वीप-निवासी, **कादर** और **बैगा** जनजाति इसके उल्लेखनीय अपवाद हैं। इनमें से बैगा जनजाति गोंड समूह की जनजातियों में से एक है और क्योंकि इस समूह में कुल का प्रचलन पाया गया है, अत: हो सकता है कि बैगा के बारे में इसका उल्लेख होना संभवत: छूट गया हो।

अंडमान के पिगमी संसार के सबसे पिछड़े लोगों में से हैं। मेन और रेडक्लिफ ब्राउन ने इसमें कई जनजातियाँ प्रचलित पाईं। दोनों ने इसमें विवाहित दंपत्ति एवं इनकी संतान से बनने वाले एकाकी परिवार के प्रचलन का उल्लेख भी किया। पोर्टमेन द्वारा बताया गया कि सामान्यत: **उपकुल** (सेप्ट) कही जानेवाली स्थिति भी इनमें पहले प्रचलित थी (रिवर्स ने क्लान और सिब के स्थान पर सेप्ट शब्द का प्रयोग किया है)। रेडक्लिफ ब्राउन ने इनमें ये उपकुल तो नहीं देखे किंतु अपना यह मत अवश्य व्यक्त किया है कि ये उपकुल त्यौहार आदि अवसरों पर मित्रता निभाने एवं इकट्ठे होने वाले कुछ स्थानीय समूहों से बनने वाले समूह रहे होंगे।

अन्य भारतीय जनजातियों में से किसी के भी बारे में ऐसा कोई विशेष उदाहरण उपलब्ध नहीं है जिससे इनमें कुल की अनुपस्थिति सिद्ध होती हो। वैसे अध्ययन में प्रयुक्त समान शब्दावली के अभाव एवं प्रत्येक नृवर्णनवेत्ता द्वारा प्रयुक्त किए गए शब्दों की परिभाषा की सामान्य अनुपस्थिति की स्थिति में किसी स्पष्ट निष्कर्ष पर पहुँच पाना काफी कठिन ही रहा है।

आसाम के **नागाओं** में भी कुल पाए जाते हैं। यों **खेल** नामक उनके स्थानीय समूह केवल क्षेत्रीय होते हैं, और यह जरूरी नहीं कि ये स्वजन-समूह भी हों ही।

नोट

कुकी जनजाति के नृवर्णनवेत्ता जे. सेक्सपियर के अनुसार लुशाई कुकियों में कुल समूह बृहत् परिवार से थोड़े ही बड़े होते हैं और इनके सामाजिक जीवन में कुलों का कोई स्पष्ट प्रकट रूप देखने में नहीं आता। ये कुल परिवारों में बंटे रहते हैं। सेक्सपियर के वर्णन से यह पता नहीं चलता कि इन कुलों में एकपक्षीय महत्त्व का प्रचलन है या नहीं। साथ ही यह भी स्पष्ट नहीं होता कि इन कुलों की बहिर्विवाही विशेषता की वास्तविकता क्या है, क्योंकि सेक्सपियर के उल्लेख से केवल निकटतम संबंधियों के बीच विवाह निषेध जैसे सीमित बहिर्विवाह का ही पता चलता है। अतः यह उलझनपूर्ण बात ही है कि इन लोगों के लिए कुल का प्रयोग किस अर्थ में किया गया है।

गुर्डन के अनुसार **खासी** जनजाति में भी कुल पाए जाते हैं। ये कुल बहिर्विवाही बताए गए हैं। इससे कुल की परिभाषा संबंधी आवश्यकता पूर्ति संतोषप्रद रूप में हो ही जाती है। खासी मातृरेखीय लोग हैं इनमें निवास मातृस्थानी होता है, चाहे यह प्रायः अस्थायी ही होता हो। कुल बहिर्विवाह के नियम का उल्लघन इस अर्थ में काफी खतरनाक माना जाता है कि इसके विनाशकारी सामाजिक-धार्मिक परिणाम हो सकते हैं। संपत्ति का उत्तराधिकार स्त्रियों को प्राप्त होता है। अस्तु, खासी कुलों पर आधारित सामाजिक संगठन का अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

कोरवा एक अंतर्विवाही जनजाति है जो बहिर्विवाही कुलों में बंटी हुई है। मध्यभारत की कई प्रोटो-आस्ट्रेलियाई जनजातियों के बारे में बहिर्विवाही कुलों के प्रचलन की जानकारियाँ दी गई हैं। इसमें कुल केवल बहिर्विवाह से ही नहीं टोटमवाद से भी सहसंबंधित बताए गए हैं। **संथालों** में सौ से भी अधिक कुल हैं जिनका नामकरण पौधों, पशुओं या भौतिक पदार्थों के आधार पर किया गया है। **हो** जनजाति में किल्ली बहिर्विवाह कुल है। इनकी संख्या पचास से अधिक है। इसी तरह **उरांव, मुंडा** और **खरिया** कुल भी बहिर्विवाही और टोटमवादी हैं। राय ने उरांव कुलों की उत्पत्ति जोड़ एवं तोड़ की प्रक्रिया के संदर्भ में बताई है। **भील, कुरमी, कमार** और **भूमिज** भी बहिर्विवाही कुलों में बंटे हुए हैं। महान् **गोंड** जनजाति के मुरिया, मारिया एवं अन्य तबकों में भ्रातृदलों के प्रचलन की जानकारी भी मिली है।

टोडा जनजाति का दो अंतर्विवाह द्विदलों में वर्गीकरण अपने-आप में काफी महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इसी से इनमें द्वैधसंगठन कहे जाने वाले सामाजिक संगठन का विकास हुआ है। ये दोनों द्विदल तारथोरल और तेइवालिओल कहे जाते हैं। इसमें से पहला दूसरे की तुलना में बहुसंख्यक है। ये दोनों पितृवंशी एवं मातृवंशी कुलों में बंटे हुए हैं। इन द्विदलों की उत्पत्ति की चर्चा पीछे की ही जा चुकी है।

मयूरभंज के **खरियाओं** के बारे में राय ने बताया है कि, यद्यपि वर्तमान समय में इनमें कुल प्रचलित नहीं है तथापि भूतकाल में ये अवश्य प्रचलित रहे होंगे–जो संभवतः उसी तरह समाप्त हो गए जैसे इनकी भाषा समाप्त हो गई। कुछ पहाड़ी इलाकों के खरियाओं का ऐसा अस्पष्ट विचार है कि सभी पहाड़ी खरिया नागागोत्र के सदस्य हैं। सालुक (चिड़िया), साल (मछली), अशोक (फूल), सारू (जिमीकंद), बलिया (मछली), और नाग (सर्प) के साथ अस्पष्ट टोटमी संबंधों का इनमें प्रचलन भी राय ने देखा है। मयूरभंज के ये पहाड़ी खरिया अपने टोटमी नामों का प्रयोग अब भी करते हैं। ये इन्हें न तो खाते हैं और न किसी अन्य तरह इन्हें काम में लेते या नुकसान पहुँचाते हैं। तथापि, इन टोटमों ने कुल-बहिर्विवाह का निर्धारण इनमें नहीं किया है। ऐसा संभवतः इसलिए भी हो सकता है कि इनका मूल कुल - संगठन और साथ ही टोटमवाद समाप्त हो गया हो और इधर हाल ही में इन्होंने अपनी पड़ोसी जनजातियों से टोटमी नाम ग्रहण कर लिए हों। हो, मुंडा और संथालों द्वारा कुल के लिए प्रयुक्त **किल्ली** शब्द खरियाओं ने भी, बिना किसी समान कुल-संगठन के ग्रहण कर लिया है। सिद्धांततः खरिया मानते हैं कि कुल-बहिर्विवाही होते हैं किंतु यथार्थतः जैसाकि ऊपर बताया जा चुका है, ये कुल-बहिर्विवाह का पालन नहीं करते। यह ऐसा उदाहरण है जो एक संस्कृति द्वारा पड़ोस के संस्कृति-समूहों के संस्कृति तत्वों को ग्रहण करने के ऐतिहासिक विकास-जनित भ्रम को स्पष्ट करता है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें–

1. कुमार, चेंचू और बिरहोर जैसी पिछड़ी जनजातियों सहित भारत की लगभग सभी ········· में कुल पाया जाता है।
2. धेलकी खरियाओं में दस ········· टोटमी कुल पाए जाते हैं।
3. हॉपिकन्स के अनुसार भोजन प्रदान करने वाले ········· के प्रति श्रद्धा पैदा होना स्वाभाविक माना जा सकता है।

वंशानुक्रमण

आधुनिक परिवार में स्वजनता पिता एवं माता दोनों के जन्म के परिवारों के साथ जोड़ी जाती है। ऐसे परिवार को **द्विपक्षीय समूह** कहा जाता है। वैसे यह भी सही है कि ऐसी स्थिति में दोनों पक्षों को समान महत्त्व नहीं दिया जाता। उदाहरणार्थ, यह जरूरी नहीं कि माता के कुंवारेपन का गोत्र नाम संतान के साथ जोड़ा जाए। जैसा कि इस पुस्तक में अन्यत्र उल्लेख किया गया है, आदिम समाजों में अन्य प्रकार के वंशानुक्रम भी प्रचलित होते हैं। ऐसे सिब भी पाए जाते हैं, जो वंशानुक्रम की दो में से एक रेखा की पूर्ण अनदेखी कर देते हैं। इन्हें **एकपक्षीय समूह** कहा जाता है। इनके विपरीत **द्वैध वंशानुक्रमण** और **द्विरेखीय** स्वजन समूह भी पाए जाते हैं। इस दूसरे प्रकार के समूह (द्विरेखीय) की रचना केवल उन्हीं व्यक्तियों से होती है, जो आपस में पितृरेखीय और मातृरेखीय दोनों प्रकार के संबंधों से जुड़े रहते हैं। द्वैध वंशानुक्रम में दोनों रेखाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले कुछ ही स्वजनों को सम्मिलित किया जाता है।

जो व्यक्ति एक ही पूर्वज के वंशज होते हैं उन्हे **समस्त्रोतीय बन्धु** (संपिड) कहा जाता है। यदि यह समान पूर्वज पुरुष हो तब इन वंशजो को **पितृबन्धु** या **पितृरेखीय स्वजन** कहा जाता है और यदि समान पूर्वज स्त्री हो तब इन वंशजों को **मातृक स्वजन** या **मातृरेखीय स्वजन** कहते हैं।

जो स्वजन वंशानुक्रम में प्रत्यक्षत: एक-दूसरे से संबंधित होते हैं, उन्हें **एकसूत्री स्वजन या** एकशाखीय स्वजन कहा जाता है और जो मुख्य समूह से प्रशाखा रूप में, अलग हो जाते हैं, चाचा और चचेरे भाई-भतीजे, उन्हें **भिन्न शाखीय स्वजन** कहते हैं।

टोटमवाद

गोल्डनवीजर के कथनानुसार, जब हम टोटमवाद की चर्चा करते हैं तब इससे हमारा अभिप्राय किसी जनजाति के सामान्यत: **सिब** प्रकार के सामाजिक संगठन के साथ जुड़ी एक विशेष प्रकार की पारलौकिकता से होता है। इस पारलौकिकता की रचना कतिपय प्रकार के पशुओं, पौधों या प्राकृतिक पदार्थों के प्रति विशिष्ट अभिवृत्ति से होती है। यह अभिवृत्ति भिन्न-भिन्न रूपों में प्रकट होती है। यथा, टोटमी पौधे या पशु से वंशनिर्धारण, टोटमी प्राणियों को मारने या/और खाने पर निषेध; टोटमी पशु की मृत्यु का सामूहिक रूप में शोक प्रकट करना; टोटम एवं टोटमपंथियों के बीच शारीरिक और मानसिक विशेषकों का प्रचलन माना जाना; टोटम को टोटमपंथियों के दैव अभिभावक के रूप में देखना; टोटम चिह्नों को तावीजों के रूप में पहनना एवं यहाँ तक कि, इन्हें शरीर पर गोदवाना; टोटमी प्राणियों की वृद्धि हेतु समारोहों का आयोजन करना, टोटमी जनजातियों की सिबों का नामकरण टोटमों के आधार पर करना, आदि-आदि।

धेलकी खरियाओं में दस बहिर्विवाही टोटमी कुल पाए जाते हैं। प्रत्येक कुल के सदस्य एक समान टोटम में विश्वास रखते हैं और इसी से इनमें सामाजिक संगठन की भावना सुदृढ़ होती है; इनके नाम हैं– 1. मुरा (कछुआ), 2. सोरेन या सोरेंग या टोरेंग (चट्टान या पत्थर), 3. सामद (एक प्रकार का हरिण), 4. कागे (बटेर)–यह सामद कुल का

नोट

टोटम है, 5. कारलिहा (फल), 6. छारहड या छारहा (चिड़िया), 7. हंसदा या दानदुंग या एंड (सर्पमीन), 8. मेल (कूड़ा-कचरा), 9. किरो (चीता)—यह मेल कुल का टोटम है, और 10. टोपनो (एक प्रकार की चिड़िया)।

कमार भी कई बहिर्विवाही कुलों में बंटे हुए हैं। प्रत्येक कुल किसी-न-किसी प्रकार के टोटम से जुड़ा रहता है, किंतु धीरे-धीरे यह संबंध समाप्त होता जा रहा है। इन कुलों का प्राथमिक कार्य विवाह नियमन करना बताया गया है। कमार कुल ये हैं: जगत् (इनके पूर्वजों ने विश्व-भर का भ्रमण किया); नेतम (कछुआ); मरकम (यह कुल कछुए की पूजा करता है और मगर को दुश्मन मानता है); सोरी (एक जंगली रेंगनेवाला प्राणी), वाघसोरी (चीता), नाग सोरी (सर्प), कंजम (बकरा), माराई (लाश भक्षी), और छेदिहा (बच्चे)। इन नामों की कई मिथकीय व्याख्याएँ हैं। जैसे, कंजम कुल के सदस्य बकरे और एक कमार लड़की के संयोग की संतान माने जाते हैं। नेतम जलप्लावन के समय कछुए द्वारा बचाए गए थे। एक अन्य समूह मगर की पीठ पर चढ़कर जा रहा था किंतु समुद्र के बीचोंबीच इनमें से कुछ को मगर खा गया। बचे हुए ने कछुए से विनती की और कछुए द्वारा बचा लिए गए। इस कछुए की पीठ पर नेतम कुल वाले पहले ही चढ़े हुए थे। यह दूसरा समूह अपने-आपको मरकम कहने लगा। जगत् और छेदिहा कुल वालों में ऐसे किसी टोटमी विश्वास का प्रचलन नहीं पाया गया। स्थानीय विशेषकों (ट्रेट्स) के आधार पर इस सूची को और विस्तृत बनाया जा सकता है।

टोटमवाद पर गोल्डनवीजर द्वारा 1910 में लिखे गए प्रसिद्ध लेख के प्रकाशन के पूर्व नृतत्ववेत्ता इस विषय पर काफी भ्रम में उलझे हुए थे। तब तक लेंग, **दुर्खीम, फ्रेजर**, **रिवर्स** आदि इसकी व्याख्या करने की कोशिश कर चुके थे। कुछ ने कुल एवं टोटम के संयोग को किसी भी रूप में रहस्यमय या अर्थपूर्ण नहीं बल्कि नामकरण की महज एक पद्धति माना। अन्यों ने, कतिपय प्रकार के भोज्य पशुओं एवं पेड़-पौधों के संदर्भ में व्यापार में समृद्धि तथा सहयोगी श्रम-विभाजन का आर्थिक अभिप्रेरण इसमें निहित पाया। यह दूसरी व्याख्या फ्रेजर की है। फ्रेजर ने ही आस्ट्रेलियाई प्रमाणों के आधार पर एक अन्य सिद्धांत प्रस्तावित किया। उन्होंने बताया कि आदिम लोग गर्भनिर्धारण सहवास की भूमिका से अनभिज्ञ थे। गर्भ जब काफी विकसित अवस्था में पहुँच जाता तभी ये इससे अवगत हो पाते थे। ऐसे बोध की स्थिति में ये लोग निकटतम पशु या पौधे को ही गर्भनिर्धारण का कारण मान लेते।

हॉपिकन्स ने बताया कि भोजन प्रदान करने वाले पशुओं के प्रति श्रद्धा पैदा होना स्वाभाविक माना जा सकता है। टोडाओं की अपनी भैंसों के प्रति श्रद्धाशीलता एक सर्वविदित तथ्य है। **दुर्खीम** ने टोटमवाद को सामूहिक प्रतिनिधित्व—सामाजिक मस्तिष्क—के प्रतीक रूप में देखा। **टायलर** के कथनानुसार, आदिम लोगों का विश्वास रहा है कि मृत्यु के पश्चात् एक व्यक्ति की आत्मा किसी पशु या पौधे में निवास करने लग जाती है, और संभवत: इसीलिए इस प्रकार के संपूर्ण प्राणियों की सुरक्षा टोटमवाद द्वारा की जाती है। इस प्रकार, दुर्खीम की तरह ही टायलर की व्याख्या के अनुसार भी टोटमवाद धार्मिक पूजा-आराधना का एक प्रकार है। अधिक स्पष्ट शब्दों में, टायलर के अनुसार, यह पूर्वज पूजा है और दुर्खीम के अनुसार समाज की पूजा। **बोआस** और **स्वाटंन** जैसे लेखकों के अनुसार टोटमवाद व्यक्तियों का पशुओं या पेड़-पौधों के साथ वैयक्तिक संबंधों का विस्तार है। टोटम एवं टोटमपंथियों के बीच एक विशेष प्रकार के स्वजनता संबंध के रूप में ऐसे संबंधों का साधारणीकरण किया जा सकता है।

गोल्डनवीजर ने बताया है कि टोटमवाद की इस पहेली का कोई भी उपयोगी हल नहीं निकाला जा सकता क्योंकि टोटमवाद की जटिलता विधितापूर्ण होती है एवं स्थान के साथ-साथ बदलती रहती है। इसके सभी तथाकथित विशेष लक्षण भी हर जगह नहीं पाए जाते। उन्होंने टोटमवाद को एक सामाजिक-धार्मिक संस्था माना। इधन हर्बर्ट **रिजले** ने अपने भारतीय दत्त के आधार पर बताया है कि यहाँ टोटमवाद का धार्मिक पक्ष मर चुका है और केवल सामाजिक पक्ष ही क्रियाशील है। साधारणीकरण के तौर पर हम कह सकते हैं कि जहाँ तक भारतीय टोटमवाद की बात है, पशुओं और वनस्पतियों से संबंध यहाँ संयोगमात्र रहे हैं, किंतु हैं अवश्य। ऐसा कई उदाहरणों से सिद्ध होता है। **एल्विन** ने जुआंगों में टोटमी उपकुलों (सेप्ट्स) का प्रचलन देखते हुए बताया है कि **टोटमवाद** एक ऐतिहासिक संयोग, या अनुकरण, अर्थात् प्रसार का परिणाम भी हो सकता है। उदाहरणार्थ, कबूतर मारने वाला कोई व्यक्ति यदि

नोट

संयोगवश अंधा हो जाता है तो संभव है कि स्थानीय उपचारक इन दोनों घटनाओं का संबंध जोड़ दें। परिणामत: व्यक्ति में भयवश सभी कबूतरों के प्रति श्रद्धाभाव पैदा हो सकता है और एक समय ऐसा आ सकता है जब वह कबूतरों की पूजा और सुरक्षा करने लग जाएँ।

सामान्यत:, टोटमवाद के मुख्य लक्षण तीन है: 1. किसी पशु या पौधे के प्रति विशिष्ट अभिवृत्ति, 2. कुल संगठन, और 3. कुल बहिर्विवाह। तथापि, यहाँ यह बात ध्यान में रखने की है कि कुल और टोटमवाद तथा बहिर्विवाह और टोटमवाद के बीच कोई दर्शाने योग्य कारणात्मक संबंध नहीं है। **मर्डक** की श्रमसाध्य सांख्यिकी विधि भी एकपक्षीय समूहों– जैसे कुल इनमें से एक है, और टोटमवाद के बीच कारणात्मक संबंध बताने में असफल नहीं है।

भारत की मध्यक्षेत्रीय पट्टी में रहने वाली अधिकांश प्रोटो-आस्टेलॉइड जन-जातियाँ टोटमी क्षेत्र का उत्कृष्ट उदाहरण है। यों टोटम का प्रचलन अन्य क्षेत्रों में रहने वाली जनजातियों तथा जातियों में भी पाया जाता है। संभावना है कि भारत में टोटमवाद का विकास प्रोटो-आस्ट्रेलॉइडों द्वारा ही किया गया होगा। किंतु अब यह किंचित्रूपेण आसाम की मंगोलाइड नागा जनजातियों में भी पाया जाता है। इसका प्रचलन कई अन्य उन्नत समूहों में भी हो गया है, चाहे ये टोटमी पशु या पौधों के प्रति भावनात्मक लगाव रखते हों या न रखते हों।

भारत में टोटमवादी लोगों, निरपवादरूपेण, बहिर्विवाही कुलों में संगठित हैं। उरांव जनजाति में टोटमी समूहों की उत्पत्ति की विस्तृत व्याख्या **राय** ने की ही है। टोटमी कुलों की उत्पत्ति के आधारों के रूप में जोड़, तोड़ एवं साधारणीकरण की चर्चा की गई है। जोड़ का अर्थ है कई परिवारों द्वारा सामूहिक रूप में एक समान नाम ग्रहण कर लेना। कभी-कभी कोई कुल इतना बड़ा हो जाता है कि, एक स्थिति में, टूटकर छोटे-छोटे समूहों में बंट जाता है। इसे तोड़ की प्रक्रिया कहा जाएगा। ऐसी स्थिति में यदि मूल कुल चीता होता तो नए कुलों के नाम प्राय: चीते की पूँछ, चीते का सिर, चीते के दांत आदि रख लिए जाते हैं। कभी ऐसा भी हो सकता है कि किसी पशु या पेड़ द्वारा कभी किसी व्यक्ति को बचाया गया हो या कोई हानि पहुँचाई गई हो। परिणामत: वह व्यक्ति ऐसे पशु या पेड़ के प्रति विशेष कृतज्ञता या भय अनुभव करने लग सकता है और बाद में उसके वंशज ऐसे विशेष संबंध की सततता भी बनाए रख सकते हैं। अत: इस प्रकार के साधारणीकरण द्वारा भी टोटमवाद की उत्पत्ति हो जाती है। हो जनजाति में कुलों की उत्पत्ति के बारे में प्रचलित लोकविश्वासों की कहानियों से भी प्रकट होता है कि किसी व्यक्ति के किन्हीं पशुओं या पेड़-पौधों के साथ संयोगिक संबंधों को, अधिकांश स्थितियों में बाद में साधारणीकृत किया जाता रहा है। **हटन** का विश्वास है कि भारत में टोटमवाद संभवत: फ्रेजर द्वारा प्रस्तुत गर्भाधान सिद्धांत में निहित कारकों पर आधारित है और सहवर्धन के परिणाम के रूप में, अर्थात् गौण कारकों के योग से, इसका विकास होता है। अन्य शब्दों में, कभी किसी संस्था का आरंभ मामूली तौर पर ही हो सकता है, किंतु समय के साथ कई प्रकार के गौण कारण भी ऐसी संस्था की सुदृढ़ता बढ़ाने में योग दे सकते हैं। इन गौण कारणों में एक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण कारण पारिस्थितिक (इकोलॉजिकल) संतुलन बनाए रखने की आवश्यकता, अर्थात् मनुष्य-प्रकृति संबंधों का सामान्य सामंजस्य बनाए रखना है। इससे मनुष्य और उसके पर्यावरण के बीच सहानुभूतिपूर्ण संबंध बनाए रखे जा सकते हैं। इसी से सामाजिक स्तर पर टोटमवाद का विकास होता है।

कुल और बहिर्विवाह के साथ टोटमवाद के स्थायी संबंध की थोड़ी-बहुत व्याख्या आवश्यक है। यह बात पहले ही बताई जा चुकी है कि बहिर्विवाह एकपक्षीय समूहों का एक अनिवार्य सहगामी लक्षण है, क्योंकि अंतर्विवाह को निषिद्ध किए बिना ऐसे समूहों की रचना संभव नहीं हो सकती। यदि व्यक्ति अपने ही समूह में विवाह करने लगे तो एक समय ऐसा आ सकता है जब ऐसा समूह पूर्णत: पितृवंशीय या पूर्णत: मातृवंशीय नहीं रह सकेगा।

इसलिए हम कह सकते हैं कि एकपक्षीय समूहों (कुलों) और बहिर्विवाह के बीच संबंध तात्त्विक महत्त्व का है। यह संबंध कारणात्मक और सहज (जैव) है। किंतु यही बात टोटमवाद और बहिर्विवाह के संबंध के बारे में नहीं कही जा सकती। टोटमवाद और बहिर्विवाह के बीच कोई तर्कसंगत, स्पष्ट या कारणात्मक संबंध नहीं है।

नोट

सभी प्रकार के एकपक्षीय समूहों के बारे में लिखते हुए **मर्डक** का कथन है टोटमवाद वंश, सिब, द्विदल आदि की समान विशेषता है। जब ऐसे सामाजिक समूहों के नामकरण की आवश्यकता होती है तो पशु-नाम इसकी पूर्ति बखूबी कर ही देते हैं। इस प्रकार के संबंध के अन्य कोई भी कारण दिए जा सकते हैं, किंतु वास्तविक अनुभव बताता है कि जहाँ कहीं कुल-संगठन होता है वहाँ यह सामान्यत: टोटमवाद से संबद्ध पाया ही जाता है यों गुर्डन ने खासियों के कुल बहिर्विवाह के बारे में तो लिखा है किंतु इनमें टोटमवाद का प्रचलन है या नहीं, इसके बारे में कुछ नहीं कहा है।

उपरोक्त उदाहरण से यह प्रमाणित हो जाता है कि टोटमवाद और बहिर्विवाह केवल इसी तथ्यवश संबंधित पाए जाते हैं कि दोनों सामान्यत: या तात्त्विक रूप में कुल संगठन से सूत्रबद्ध होते हैं, यद्यपि दोनों एक-दूसरे से स्वतंत्र हैं।

2.2 नातेदार समूह, सहवंशीय स्वजन (Kingroup, Kindred)

नातेदार/स्वजन (Kin)

रक्त अथवा विवाह बंधनों द्वारा आबद्ध व्यक्तियों को नातेदार या स्वजन कहते हैं। अधिकतर नातेदार परिवार से अलग रक्तमूलक होते हैं। रक्त संबंधों की मान्यता बहुधा सांस्कृतिक प्रतिमानों द्वारा निर्धारित होती है। यही कारण है कि संबंध श्रेणियों में कुछ व्यक्ति स्वजन या नातेदार माने जाते हैं, जबकि कुछ अन्य संबंधियों को सिद्धान्त: स्वीकार नहीं किया जाता।

भिन्नशाखाई स्वजन/नातेदारी (Collateral Kin)

जो स्वजन मुख्य समूह से प्रशाखा के रूप में अलग हो जाते हैं, जैसे चाचा और चचेरे भाई-भतीजे आदि भिन्नशाखाई स्वजन कहलाते हैं। सरल भाषा में, व्यक्ति के समरेखीय स्वजनों के वंशजों को भिन्न शाखाई स्वजन कहते हैं।

समरेखीय स्वजन/नातेदारी (Lineal Kin)

जो स्वजन वंशानुक्रम में प्रत्यक्षत: एक दूसरे से संबंधित होते हैं, उन्हें समरेखीय या एक शाखाई स्वजन कहते हैं। समरेखीय स्वजन एक व्यक्ति के प्रत्यक्ष पूर्वज तथा प्रत्यक्ष वंशज होते हैं, जैसे व्यक्ति के माता-पिता, दादा-दादी, परदादा-परदादी तथा उसकी सन्तानें व पोते-पोतियाँ, आदि।

प्राथमिक स्वजन (नातेदारी) (Primary Kin)

एक व्यक्ति से प्रत्यक्षत: नातेदारी के आधार पर जुड़े व्यक्ति प्राथमिक स्वजन श्रेणी में गिने जाते हैं। पिता-पुत्र, पिता-पुत्री, माता-पुत्री, भाई-भाई, भाई-बहिन, बहिन-बहिन तथा पति-पत्नी प्राथमिक स्वजनों की श्रेणी में आते हैं। इनमें पति-पत्नी को छोड़कर, जो कि वैवाहिक संबंधी होते हैं, सभी रक्त संबंधी हैं।

द्वितीयक स्वजन (नातेदारी) (Secondary Kin)

प्राथमिक स्वजनों के प्राथमिक संबंधी द्वितीयक स्वजनों की श्रेणी में आते हैं, जैसे व्यक्ति का साला, दादा, मामा, नाना, आदि। प्रसिद्ध मानवशास्त्री **जी. पी. मर्डक** ने इसमें 33 प्रकार के संबंधियों का उल्लेख किया है।

तृतीयक स्वजन (Teritiary Kin)

द्वितीयक संबंधियों के प्राथमिक संबंधियों की गणना तृतीयक स्वजनों में की जाती है, जैसे साले की पत्नी या पुत्र। **मर्डक** के अनुसार एक व्यक्ति के 151 प्रकार के तृतीयक स्वजन होते हैं।

सहवंशीय स्वजन (Kindred)

द्विपक्षीय या द्विधाराई वंशक्रम के संबंधी सामूहिक रूप से सहवंशीय स्वजन कहलाते हैं। ये वंशज माता अथवा पिता दोनों की ओर से हो सकते हैं। इसमें पिता के भाई, बहिन व उनकी संतानों के साथ-साथ माता के भाई-बहिन व उनकी संतानें सहवंशी माने जाते हैं।

टास्क नातेदार समूह, सहवंशीय स्वजन के बारे में आप क्या जानते हैं?

2.3 सारांश (Summary)

- एक ऐसे रक्तमूलक एकपक्षीय वंश समूह को कुल कहते हैं, जिसके अर्द्धांशों किसी ज्ञात पूर्वज से अपने पीढ़ीगत संबंधों की खोज करते हैं।
- कुल की सदस्यता पूर्णत: रक्त संबंधों पर आधारित होती है।
- जब किसी कारण विशेष से कई कुल या गोत्र एक बड़े समूह के रूप में संयुक्त हो जाते हैं भ्रातृदल कहा जाता है। यह किसी भी जनजाति का उप-विभाजन है।
- जब कोई आदिवासी समूह किसी कारणवश दो अर्द्धांशों में बंट जाता है तो प्रत्येक अंश को भ्रातृदल, द्विदल कहते हैं। आदिवासी समूह में इसे 'द्वैध या द्विदल संगठन' कहा जाता है।

2.4 शब्दकोश (Keywords)

1. **निकटाभिगमन (Incest)**—अति निकट रूप में रक्त-संबंधों द्वारा जुड़े विषम लिंगियों के बीच स्थापित लैंगिक संबंध जिनमें विवाह वर्जित होता है, निकटाभिगमन कहलाता है। पिता-पुत्री, माता-पुत्र अथवा सहोदर भाई-बहन के बीच लैंगिक संबंध निकटाभिगमन की श्रेणी में आता है।
2. **निकटाभिगमन निषेध (Incest taboo)**—निकटतम संबंधियों के बीच वर्जित किए गए लैंगिक संबंधों को ही निकटाभिगमन निषेध कहा जाता है। जैसे पिता-पुत्री, माता-पुत्र सहोदर भाई-बहन के बीच लैंगिक संबंध वर्जित है।

2.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. वंश और कुल में क्या अंतर है?
2. भ्रातृदल का क्या अर्थ है?
3. नातेदार समूह से आप क्या समझते हैं?
4. टोटमवाद का क्या अर्थ है?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. जनजातियों 2. बहिर्विवाही 3. पशुओं।